

भादरवा सुष्ट २, मंगलवार ता. ८-९-१९६४
श्री तारुणस्वामी द्वारा रचित श्रावकाचार, गाथा-३,
१३, ३३, ३१३, ३५३थी ३५७, प्रपयन-१८

ये श्रावकाचार ग्रंथ है. इसके कर्ता तारुणस्वामी अध्याष्टिवंत ५०० साल पहले हुए. उन्होंने श्रावकाचार किसे होता है, किसप्रकार होता है उसका यहां कथन है. मंगलाचरण करते हैं, श्रावकाचार शुरु करनेसे पहले.

देव देवं नमस्कृतं, लोकालोक प्रकाशकं।
 त्रिलोकं अर्थ ज्योति, ओमाकारं च विन्दते॥१॥

पहली गाथा. क्या करते हैं? देव. चार प्रकारके देवोंके देव. ईन्द्रादिक द्वारा 'नमस्कृतं'. देवाधिदेव परमात्मा तीर्थंकरदेव त्रिलोकनाथ परमेश्वर, चार प्रकारके देवोंके भी देव हैं. चार प्रकार-भवनपति, व्यंतर, ज्योतिष और वैमानिक, जो चार प्रकारके देव हैं, वे भी उनको नमस्कार करते हैं. इसलिये देवाधिदेव करनेमें आता है. 'लोकालोक प्रकाशकं'. लोक और अलोकका प्रकाश करनेवाले. तीन लोकके पदार्थोंके लिये ज्योतिरूप है. भगवान सर्वज्ञ परमेश्वर वीतरागदेव तीन लोकमें लोक और अलोकके प्रकाशक हैं और तीन लोकके पदार्थके ज्योतिरूप हैं. तीन लोकके पदार्थकी ज्योति है कि इस जगतके पदार्थ जैसे हैं और मैं ऐसा हूं. ऐसा भगवानका ज्ञान प्रकाशता है तो उसे ज्योतिरूप करनेमें आता है.

ॐको भी वंदना करता हूं. आचार्य महाराज तारुणस्वामीको ॐका बहुत प्रेम है. तो पहले ॐ जो पांच परमेष्ठीका वाचक शब्द है, वाचक-वाच्य, उनको वंदना करते हैं. भगवानकी वाणी, भगवान ही ॐ हैं. और भगवानके मुहमेंसे 'ॐकार ध्वनि सुणी अर्थ गणधर विचारे' भगवानके मुहमेंसे ॐ वाणी निकलती है. गणधर उसमेंसे बारह अंगकी रचना करते हैं. यहां तारुणस्वामी प्रथम श्लोकमें ही श्रावकका स्वरूप करनेसे पहले, देवाधिदेवको पहले नमस्कार किया है.

१३वीं गाथा. सरस्वतीको नमस्कार.

कुज्ञानं तिमिरं पूर्णं, अंजनं ज्ञान भेषजं।
 केवलि दृष्ट स्वभावं, जिन सरस्वती नमः॥१३॥

देवाधिदेवको नमस्कार करके तारुणस्वामी यहां १३वीं गाथामें सरस्वतीको नमस्कार करते हैं. भाव सरस्वती अंतरका ज्ञान, द्रव्य सरस्वती वीतरागकी वाणी. भाव सरस्वती अंतरका सम्यक् ज्ञान. केवलज्ञान अथवा भावश्रुतज्ञान. और द्रव्य सरस्वती भगवान त्रिलोकनाथ परमात्माकी वाणी. उसको यहां सरस्वती करनेमें आया है. ये सरस्वतीको यहां नमस्कार

करते हैं.

कैसी है सरस्वती-भगवानकी वाणी? मिथ्याज्ञानरूपी अंधकारसे जो पूर्ण भाव है, उसको मिटानेके लिये.. समझमें आया? अनादिका जो अज्ञान निगोदसे लेकर अनंत बैर जैन साधु लेकर, द्विगंबर द्रव्यलिंग मिथ्यादृष्टिको धारणकर नौवीं त्रैविक्रम तक गया तो भी अज्ञानका नाश हुआ नहीं. इस अज्ञानका नाश करनेवाली (सरस्वती है). संपूर्ण अज्ञानरूपी अंधकार, पूर्ण जो अज्ञानीका भाव, उसको मिटानेके लिये भगवानकी वाणीमें सामर्थ्य है. दूसरेकी वाणी अज्ञान मिटानेमें निमित्त भी हो सकती नहीं. देजो! देवाधिदेवको नमस्कार किया (बादमें) १३वीं गाथामें यह आया. समझमें आया?

भगवान कैसे हैं? 'केवलि दृष्ट स्वभाव'. केवली द्वारा तीन काल तीन लोक जे द्विभनेमें आये, उसका प्रकाश करनेवाली ऐसी जिनेश्वर-वाणी है. भगवानकी वाणीमें तीन काल, तीन लोक जो ज्ञानमें देभनेमें आये, वही वाणीमें आया है. जैसा ज्ञान हुआ ऐसी वाणी हुई. उस वाणीको यहां सरस्वती कहते हैं. और उस सरस्वतीको यहां विनय करके नमस्कार करके श्रावकाचारका वर्णन करनेमें आता है. कलो, समझमें आया? अब, उ३. उ३ (गाथा) है न? अब तत्त्वकी बात आयी. शर्यात यहांसे होती है. देजो, क्या कहते हैं?

देवको नमस्कार करके और सरस्वतीको नमस्कार करके सम्यग्दर्शनका स्वरूप कहनेमें आता है. सम्यग्दर्शन किसको होता है? कैसे होता है? उसका क्या स्वरूप है? उसका वर्णन करते हैं.

सप्त प्रकृति विच्छेदो, शुद्ध दृष्टि व दृष्टते।

श्रावकं अव्रतं जैनं, संसार दुःख परान्मुखमा॥३३॥

सातों प्रकृतियों का सर्वथा क्षय. देजो! अपने सुबल चलता है. कर्मकी प्रकृति है वह अपनेको दोष नहीं करती है. सेठ! आता है? सबरे चलता है. कर्म अपनेको दोष नहीं करता है, यह निर्णय पहले करना चाहिये. मिथ्याश्रद्धा, मिथ्याज्ञान और राग-द्वेष रूपी मिथ्याचारित्र, कर्मसे अपनी पर्यायमें होते हैं, जैसा है नहीं. अपना अनादिका स्वरूपका अमानके कारण मिथ्याश्रद्धा, मिथ्याज्ञान और मिथ्या राग-द्वेषका परिणाम अपनी पर्यायमें अपने जिवटे पुरुषार्थसे आत्मामें होता है. ..लावज्ज! कर्म नहीं करवाता. वह पहले कला. 'सप्त प्रकृति विच्छेदा'. छेद करनेवाला अपने पुरुषार्थसे जिवटा राग-द्वेष और मिथ्यात्व करता था, वह सुबल पुरुषार्थ करके, उस सातके निमित्तसे अपनी पर्यायमें मलिनता थी, उसका छेद हुआ. तो सात प्रकृति भी उस कारणसे छेद हो जाती है. समझमें आया?

सात प्रकृतिमां नाम नहीं आता होगा. मिथ्यात्व, मिश्रप्रकृति, समकित मोहनी. ऐसी तीन प्रकृति है. दर्शनमोहनी और अनंतानुबंधी चार. अनंत संसारका कारण. अनंत क्रोध, मान, माया और लोभ. ये सात प्रकृति है. सेठ! सात प्रकृतिके नाम आते हैं? पूरे नाम नहीं आते. ठीक है, कबुल करते हैं, ठीक है. देजो! उ३में आया. 'सप्त प्रकृति विच्छेदा'.

उसका अर्थ अपने आत्मामें शुद्ध स्वभाव अर्थात् आनंद और ज्ञायकमूर्ति है, उसकी अंतर्मुख दृष्टि करनेसे सब प्रकृतिके निमित्तसे अपनी पर्यायमें जो अपराध मिथ्यात्वका था, उसका जो नाश हुआ तो सात प्रकृतिका भी नाश होता है. सात प्रकृतिका आत्मासे नाश करना पड़ता है ऐसा नहीं. समझमें आया? आत्मा पर प्रकृतिका छेद करे ऐसा नहीं. आत्मा अपना ज्ञायक चैतन्यस्वरूप.. वह अभी पीछे आयेगा, अपने स्वभावमें... उपर आदिमें आयेगा. भगवान् आत्मा वस्तु अथवा समयमें पूर्ण ज्ञायक आनंद. पर्यायमें कर्मका निमित्त है और अपराध जो अपनी भूलसे करता है. उस भूलको टालना उसका नाम सप्त प्रकृतिका नाश हो जाता है, ऐसा निमित्त-नैमित्तिक संबंध बताया है.

‘सप्त प्रकृति विच्छेदा’. अपना ज्ञायकमूर्ति पूर्णानंद स्वरूप, उसकी अंतर दृष्टि करनेसे मिथ्यात्व और अनंतानुबंधी भावका नाश होता है. क्या कला? भावकर्मका नाश होता है. भावकर्म मिथ्यात्व परिणाम, राग-द्वेष भाव वह भावकर्म है. और प्रकृति जो द्रव्यकर्म है. तो द्रव्यकर्मका भी नाश आत्मामें करना नहीं है. भावकर्मका भी नाश करुं ऐसा नहीं है. अमरचंद्रभाई! अपना शुद्ध ज्ञानमूर्ति पर्यायमें अनादिसे भूल करता था, मिथ्या अभिप्राय (था कि) पुण्यमें धर्म है, पापमें मग्न है, संयोगी यीज में करता हूं, संयोगसे मेरेमें सुप्त होता है, ऐसी जो मिथ्याश्रद्धाका अभिप्राय था, उसके साथ जो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभका विकार था, उससे मेरा स्वरूप भिन्न है, ऐसा पूर्ण शुद्ध ज्ञायककी दृष्टि करनेसे, वह विकार भावकर्म का नाश अथवा उत्पत्ति होती नहीं, उसका अर्थ भावकर्मका नाश आत्माने किया ऐसा कलनेमें आता है. अमरचंद्रभाई! भावकर्मका नाश आत्मा कर सकता नहीं. भावकर्म उत्पन्न होता है पर्यायमें, लेकिन वह स्वभाव दृष्टिसे (होता) नहीं और स्वभावकी दृष्टि करनेसे उसका नाश करना पड़ता है ऐसा भी नहीं. समझमें आया? स्वभाव ज्ञायक चैतन्यमूर्ति अर्थात् आनंद अक्षर स्वरूप परमात्मा मेरा अक्षर स्वरूप है. देओ! उसकी दृष्टि करनेसे मिथ्यात्वस्वपी विकारी भावकर्म और अनंतानुबंधीका विकाररूप परिणाम भविष्य भावकर्म, उसका नाश हो जाता है. नाशका अर्थ उस विकारकी उत्पत्ति होती नहीं. स्वभावक आश्रय-दृष्टि करनेसे विकारकी उत्पत्ति होती नहीं, उसको विकारका नाश किया ऐसा कलनेमें आया है. समझमें आया? अभ्यास नहीं. ..चंद्र! अभ्यास किया है कभी? कमाना, पैसा, पैसा, पैसा. क्या कलते हैं?

कलते हैं, ‘सप्त प्रकृति विच्छेदा’. जैनदर्शनमें ऐसी यीज है, अन्यमें ऐसा है नहीं. सात प्रकृति क्या है, उसके निमित्तसे आत्मा अपनेसे क्या अपराध करता है और उस अपराधका नाश किस प्रकारसे होता है, ऐसा उसको पहले समझमें लेना चाहिये. प्रकृति तो जो है, वह तो निमित्तमात्र है. जो प्रकृति अपनेको दोष करती नहीं. दोष करता है तो प्रकृतिको निमित्त कलनेमें आता है. शोभावावभाई! समझमें आया?

कहते हैं, 'सप्त प्रकृति विच्छेदा शुद्ध दृष्टि व दृष्टते'. देओ! है न? शुद्ध आत्मदृष्टि ही, शुद्ध क्षायिक सम्यग्दर्शन ही. धतना जेर लिया, भाई! शुद्ध दृष्टि है न? शुद्ध. शुद्धका अर्थ किया. ज्ञायक दृष्टि अथवा शुद्ध चैतन्यमूर्तिकी दृष्टि, उसका नाम सम्यग्दर्शन कहनेमें आता है कि जो श्रावकका पहला धर्मका आचरण है. श्रावकाचारमें पहला आचरण उसको कहते हैं. समजमें आया? सम्यग्दर्शनका आचरण हुअे बिना श्रावकका कोई आचरण हो सकता नहीं, होता ही नहीं. तो पहले सम्यग्दर्शनकी व्याख्या की. देओ! संख्या भी ३३ आयी है उसमें. दो तीन. समजे?

'शुद्ध दृष्टि व दृष्टते' आत्मामें .. करता है. क्या कहा? अपना स्वभाव परमानंद ज्ञायकभाव (है), ऐसी दृष्टि करनेसे सप्त प्रकृतिका विच्छेद होता है और अपना स्वभाव उसमें प्रतीतमें, दिखनेमें आता है. प्रतीतमें, दिखनेमें-श्रद्धामें, दिखनेमें आता है. ..! पहली बात श्रावककी यह मूलकी बात है. इसके बिना, सम्यग्दर्शन बिना श्रावकपना होता ही नहीं. जैन होनेपर भी. यहां देओ! 'श्रावकं अव्रतं जैनं'. तीसरा पद है. समजमें आया? ऐसा अविरती श्रावक होता है वही जैनी है. है भाई? जैनी, ये जैनी है. यहां तो तारणस्वामी उसको जैनी कहते हैं. अमरचंद्रभाई! नामनिक्षेपसे जैन है, स्थापनामें-संप्रदायमें जन्म हुआ है, उसको परमार्थसे जैन कहते नहीं. रतनवाल! हम जैनमें जन्मे हैं तो हम जैनी है. नहीं. ना कहते हैं.

'श्रावकं अव्रतं जैनं' अभी तो अव्रती जैन सम्यग्दृष्टि. जिसको अभी व्रत नहीं हो, चारित्र नहीं हो, वह प्रथम दशा जैनकी (है). 'श्रावकं अव्रतं जैनं' अव्रती जैन अपना शुद्ध आत्माको देभता है, श्रद्धा करता है, अनुभव करता है, सप्त प्रकृतिका नाश होता है. तब उसको अव्रती जैन प्रथम भूमिकाका कहनेमें आता है. समजमें आया? ओ.. सेठ! हम जैनमें जन्मे हैं (ईसलिये) हम जैन है, जैन है, ऐसा नहीं. नहीं चलेगा. देओ! क्या कहते हैं?

'संसार दुःख परान्मुखम' कैसा है जैन? कि जो अव्रती श्रावक होता है वही जैनी है. जैनका अर्थ जितनेवाला. किसको जितनेवाला? अपनी पर्यायमें राग-द्वेष और अज्ञान और मिथ्याभाव है, उसे स्वभावके आश्रयसे जितनेवाला, उसको अव्रती जैन, जैनके पहले अंक नंबरमें गिननमें आता है. कहां, समजमें आया? उसके बिना जैन कहते नहीं. मात्र पूजा, भक्ति, व्रत-बाध्यका व्रत, आचरण करो (उसमें) रागकी मंदता हो तो पुण्य है. जैनपना उसमें नहीं आया? जैनपना, तो कहते हैं कि, 'संसार दुःख परान्मुखम'. वही जैन संसारके दुःखोंसे विपरीत सुभका भोगनेवाला है. क्या कहा? आत्मा अपना शुद्ध आनंद, ज्ञायकमूर्तिकी अंतर्मुख दृष्टि करनेसे वह दुःखसे परान्मुख हो जाता है. सम्यग्दृष्टि, हां! प्रथम चौथे गुणस्थानमें अव्रती सम्यग्दृष्टि. अभी पंचम गुणस्थानका श्रावक बादमें होगा. और छटा-सातवां मुनिका

तो बादमें आता है. कलते हैं...

संप्रदायमें मावूम नहीं है कि क्या है. क्या तीर्थकर कलते हैं, क्या साधु कलते हैं, क्या ज्ञानी कलते हैं, मावूम नहीं और मान ले कि लम जैन हैं. यहां तारुणस्वामी ना कलते हैं कि उसको लम जैन कलते नहीं. शोभावालभाई! प्रयत्न करना पडेगा, असा कलते हैं. ऐसे ऐसे ही पुण्यके कारण मल जाते हैं, उसमें कुछ है नहीं. धूलमें कुछ नहीं है, उसमें क्या है? पांय-पयास कोड, दो कोड मले उसमें आत्मामें क्या आया? आत्मामें क्या आया? आत्मामें आयी ममता. वल चीज तो यहां आती नहीं. मुजे मला, असी ममता उसके पास आयी. बराबर है? ...चंदभाई! वल चीज उसके पास आती है? वल तो मलत्र रहती है. यथस्थानमें है, उसके स्थानमें है. उसे लगता है कि मैं कोडका आसामी हूं, मैं पाय कोडका (धनी हूं), वल तो ममता लुयी. ममत्व नाम दुःख लुआ, दुःख नाम आकूलता लुई. उसमें क्या आया? आकूलता आयी. क्यों, प्रेमचंदज! क्या आया? ऐसेमें आकूलता आयी. ऐसेसे नहीं, हां! उसकी ममतासे.

कलते हैं, 'श्रावकं अव्रतं जैनं, संसार दुःख परान्मुखम'. अक गाथामें कितना लरा है! अक तो, सात प्रकृति जैनमें लोती है, दूसरेमें लोती नहीं. अमरचंदभाई! सात प्रकृति. अनंतानुबंधी चार, मिथ्यात्व, मिश्र ये अन्यमें जैनके अलावा कहीं लोती नहीं. सर्वज्ञ लगवानने मार्ग देजा उसमें आत्माकी पर्यायमें पलवे मिथ्यात्वका दोष लोता है, उसमें निमित्तरूप सात प्रकृतियां पडी हैं. उस प्रकृतिका नाश कैसे लोता है? यहां तो, 'विच्छेदो' कल है. अपना शुद्ध लगवान ज्ञायकभाव चैतन्यसूर्य प्रकाशमय, जो पर्यायमें मिथ्यात्वभाव है, स्वभावके आश्रयके मिथ्यात्वभावका छेद लो जाता है. तो प्रकृतिका छेद तो सलज लो जाता है. उसका नाम लगवान तीर्थकर कलते हैं ऐसे तारुणस्वामी कलते हैं कि उसको लम जैन कलते हैं. दूसरेको जैन कलते नहीं.

'संसार दुःख परान्मुखम'. ओलो..! सम्यज्दर्शन लुआ तलसे दुःख-आकूलताके परिणामसे समकिली परान्मुख है. समजमें आया? परान्मुख नाम लिलटा है. अपने आत्मामें आनंद है, ईस आनंदका अनुभव करनेवाला समकिली है. ...याज! आलाला..! समजमें आया? अतीन्द्रिय आनंदका लंदार आत्मा पूर्णानंद प्रलु, उसमें आनंदमें घुसकर दृष्टिमें अकाकार लोकर (अर्थात्) दृष्टि स्वभावमें अकाकार लोकर सम्यज्दृष्टि जैन लुआ, वल दुःखसे परान्मुख लुआ. आकूलता है, संयोग ली है, लेकिन दृष्टिमें उससे परान्मुख लुआ. भाई! असा लिया. स्वभाव सन्मुख लुआ है.

'संसार दुःख परान्मुखम' देजो! शब्द क्या लिया? आत्मा शुद्ध आनंद और ज्ञायक है. उसके सन्मुख लुआ. सम्यज्दृष्टि जैन प्रथम लूमिकाका. स्वभाव आनंदमूर्ति लगवान, उसके सन्मुख लुआ और विकारसे परान्मुख लुआ. आलाला..! विकार और आकूलता लोनेपर ली

अेक ही क्षणमें धर्मात्मा, अपना सख्यिदानंद स्वरूप, उसमें सावधान सन्मुख हुआ है और दुःखकी आकूलता होनेपर भी उससे परान्मुख हुआ है, विमुख हुआ है, अपना मुख बदल दिया है. अमरचंद्रभाई! .. लिया है. सम्यग्दृष्टि, अपना मुख पर उपर जो मिथ्यात्वमें अनादिका था, पुण्य और पाप मैंने किया, राग-द्वेष मैंने किये, संयोग मैं प्राप्त करता हूं, संयोग मैं दूर करता हूं, अपनी ज्ञान, दर्शन, वीर्यकी जो अल्प पर्याय है, उतना मैं हूं, ऐसी जो मान्यता मिथ्यात्वमें परसन्मुखमें थी, वह जब अपना स्वभाव त्रिकाल ज्ञायक सन्मुख हुआ तो संयोग, कर्म और राग ऐसी आकूलतासे अपना मुख मोड़ दिया है. आलाला..! समझमें आया? देजो! अेक उउवीं गाथामें ठतना कला है. शोभावाकभाई! है कि नहीं उसमें? देजो! आपको दिया, सेठको लाथमें सामने दिया. वहीभातेके पत्रे धुमाते हैं कि ठस पत्रे पर क्या लिखा है? ताराशस्वामी क्या कहते हैं? समझमें आया?

जाने बिना होता होगा? संसारमें जाने बिना माल लेने जाता होगा? शक्कर लेने जाये वहां ऐसा कहे कि दूध चालिये, तो? शक्कर लेने जाना हो, सञ्ज लेनी हो, सञ्ज कहते हैं न? पचास जातकी सञ्ज हो, सञ्ज लेने जाये (और कहे कि), दाल दीजिये. सञ्ज देगा? जो सञ्ज लेनी हो उसका नाम ले, उसका ज्ञान करे तो सञ्ज मिलेगी. दूधीकी सञ्ज लाओ. वहां जाकर कहे कि, कपडा लाओ. पागल है. सञ्जकी दुकान पर कपडा कहांसे आया? वहां भी उसका भान करना पडता है कि मैं सञ्ज लेने आया हूं. लेकिन सञ्जमें पचास चीज है वह नहीं. मैं तो लौंकी लेनेको आया हूं. तो उसका ज्ञान दूसरेसे भिन्न करना पडता है. ये नहीं, ये नहीं, करेवा नहीं, तुर नहीं, ये लौंकी (चालिये). ऐसा करना पडता है कि नहीं? ऐसा ज्ञान किये बिना मिल जाता है?

ऐसे आत्मा, संयोग नहीं, राग नहीं, कर्म नहीं, अपूर्ण पर्याय जितना नहीं. मैं पूर्ण ज्ञायकभाव स्वभाव हूं, ऐसा परसे भेदज्ञान करनेसे अपने स्वरूपका पत्ता लगता है. उसके सिवा स्वरूपका उसे लगता नहीं. समझमें आया?

कहते हैं कि 'संसार दुःख परान्मुख'. ओलो..! भाषा कैसी की है? शुद्ध दृष्टि अंतर स्वभाव सन्मुख (लुई) तो दुःखसे परान्मुख हुआ. स्वभाव भगवान आत्माके सन्मुख हुआ और विकल्प है सही, दुःख (है), अभी अविरत सम्यग्दृष्टि है. दुःख तो है, राग है, विषयभोगका राग है. लेकिन उस दुःखसे दृष्टि परान्मुख है. स्वभावमें आनंद सन्मुख दृष्टि है, दुःख पर उसकी दृष्टि है नहीं. उसका नाम अत्रत श्रावक जैन कहनेमें आता है. अब, व्रत तो बादमें (आर्येंगे). बारह व्रतका धारण करनेवाला श्रावक, वह तो बादकी बात है. पहले वह उसके पास होना चालिये. ये नहीं है तो उसे श्रावक कहनेमें आता नहीं. कलो, समझमें आया? अब उउउ. सबमें आगे तीन आया है. दर्शन, ज्ञान और चारित्र तीन होते हैं कि नहीं? उउउ है न. देजो!

द्रव्यदृष्टि च संपूर्ण, शुद्धं सम्यग्दर्शनम्।

ज्ञानमयं सार्थं शुद्धं, करणानुयोग चिंतनं॥३५३॥

है ३५३? देओ! करणानुयोगकी बात करते हैं, तारुणस्वामी. करणानुयोगका अर्थ कर्म, कर्मका परिणाम, आत्माका सूक्ष्म परिणाम क्या है, वह करणानुयोगमें बात चलती है. द्रव्यानुयोगमें तत्त्वकी बात चलती है, करणानुयोगमें परिणामकी सूक्ष्म बात चलती है, कथानुयोगमें कथा चलती है, करणानुयोगमें पुण्य-पापका अधिकार चलता है. पुण्य किसको और पाप (किसको कलना). यहां करणानुयोगमें कलते हैं, 'द्रव्यदृष्टि च संपूर्ण'. द्रव्यदृष्टि-द्रव्यार्थिकनय पूर्ण द्रव्यको देजनेवाली है. क्या कलते हैं? देओ! कभी पढा है कि नहीं? सेठ! ना कलते हैं, रामजुभाई ना कलते हैं. समजमें आया? क्या कलते हैं?

'द्रव्यदृष्टि च संपूर्ण, शुद्धं सम्यग्दर्शनम्'. द्रव्य अजंड मेरा. द्रव्य यानी ये पैसे नहीं, हां! आत्मा. वह कलते थे, यहां आये थे, मोहनभाईके रिश्तेदार थानसे आये थे. विभा है न? द्रव्यदृष्टि ते सम्यग्दृष्टि. अपने वहां जैन स्वाध्याय मंदिरमें है न. द्रव्यदृष्टि ते सम्यग्दृष्टि. उसने कल, महाराज! ये पैसेवाला सम्यग्दृष्टि ऐसा कहां-से आया? क्योंकि यहां पैसेवाले बहुत आते हैं. पैसेवाले पहलेसे बहुत आते हैं. लाजोपति, कोडोपति सम्यग्दृष्टि? अरे..! आपको मालूम नहीं है. थानवाले माणिक्यंदभाई. समजमें आया? भाई! द्रव्यदृष्टि (यानी) ये आपके पैसे नहीं. शोभावावभाई!

यहां द्रव्य शब्द आया न? 'द्रव्यदृष्टि च संपूर्ण'. द्रव्य यानी अपना स्वभाव-वस्तु त्रिकाव. उसे द्रव्य कलते हैं. अक समयमें राग नहीं, निमित्त नहीं, अक समयकी पर्याय नहीं. और गुण-गुणिका भेद नहीं. मैं गुणी आत्मा हूं और मेरेमें ज्ञान, दर्शन, आनंद है, ऐसा भी भेद नहीं. अभेद अकाकार द्रव्य स्वभाव त्रिकाव ज्ञायक है, उसको यहां द्रव्यदृष्टि कलते हैं. जो सम्यग्दर्शनका विषय द्रव्य. उसकी दृष्टि उसका नाम सम्यग्दर्शन. समजमें आया? आलाला..! उसमें कोई भगवान भी काम करते नहीं और भगवान पर लक्ष्य करनेसे द्रव्यदृष्टि होती नहीं. शुभ रागकी क्रियामें लक्ष्य होनेसे भी द्रव्यदृष्टि होती नहीं. अपनी पर्यायका लक्ष्य करनेसे भी द्रव्यदृष्टि होती नहीं. गुण-गुणिका भेद करनेसे भी द्रव्यदृष्टि होती नहीं.

आत्मा अनंत गुणका पिंड है, पूर्ण ज्ञान और आनंदका धरनेवाला मैं आधार हूं. और ये गुण मेरेमें रहनेवाले आधेय है. शक्कर आधार है और शक्करमें सङ्केपना, भीठस रहती है वह आधेय है, ऐसा भेद भी जिसमें नहीं है. अक द्रव्यदृष्टि पूर्ण ज्ञायकमूर्ति... संपूर्ण द्रव्यदृष्टि द्रव्यार्थिकनय पूर्ण द्रव्यको देजनेवाली है. क्या कल? द्रव्यदृष्टि संपूर्णको देजनेवाली है. संपूर्ण शब्द पडा है न. समजमें आया? देओ! ये आत्माका वास्तु होता है. सेठ! द्रव्यदृष्टि संपूर्ण, ऐसा तारुणस्वामी ३५३ गाथामें पुकार करते हैं. जिस दृष्टिमें द्रव्य आया वह दृष्टि संपूर्ण है. बाकी संपूर्ण नहीं, सब अपूर्ण है. समजमें आया? अपनी पर्यायको

मानना, वह भी अपूर्ण है। वह संपूर्ण नहीं। मात्र गुणके भेदको मानना वह भी संपूर्ण नहीं। राग, पुण्य-पाप, दया, दानका विकल्प उठता है उसको मानना वह संपूर्ण नहीं। द्रव्यदृष्टि संपूर्ण है। थोड़ी सूक्ष्म बात है, लेकिन आज तो हिन्दीमें अक ही व्याख्यान है न. बादमें थोड़ा ध्यान रचना, समझना.

‘द्रव्यदृष्टि च संपूर्ण’ अक समयमें भगवान पूर्ण, पूर्ण, पूर्ण अभेद अक रूप प्रभु, असी दृष्टिको यहां पूर्ण संपूर्ण कहते हैं. इस संपूर्णकी दृष्टि लुअे बिना द्रव्यदृष्टि होती नहीं. और द्रव्यदृष्टिको ही संपूर्ण लक्ष्यमें आता है, उसको सम्यग्दर्शन कहते हैं. लडके घर पर वांचन करते हैं या नहीं? कलौ, समझमें आया? देओ! द्रव्यार्थिकनय पूर्ण द्रव्यको देभनेवाली है. द्रव्यार्थिकका अर्थ क्या है? अपना जो द्रव्य त्रिकाव ज्ञायकमूर्ति है, जिस ज्ञानका... द्रव्यार्थिक, द्रव्य नाम वस्तु, अर्थ नाम प्रयोजन है, जिस ज्ञानमें द्रव्य प्रयोजन है, जैसे ज्ञानको द्रव्यार्थिकनय कलनेमें आता है. बहुत सूक्ष्म. ..याओ! कितने सालसे संप्रदायमें लौ, लेकिन द्रव्यार्थिक यानी क्या? द्रव्य यानी क्या? द्रव्यदृष्टि संपूर्ण यानी क्या? (ये मालूम नहीं होता).

ये आत्माका माणिकस्तंभ है. मोक्षमंडप डालनेमें सम्यग्दर्शन माणिकस्तंभ है. शादी करते हैं न? शादी. क्या करते हैं? लकडी डालते हैं न? स्तंभ डालते हैं. चार बाजु लकडी (डालते हैं). माणिकस्तंभ कहते हैं न. शादी करते समय. चार लकडी है, चार गतिमें रभड. जैसे कहते हैं न शादीमें? जैसे यहां मोक्षका माणिकस्तंभ सम्यग्दर्शनमें है. अमरचंद्रभाई! ये चार प्रकारका-दर्शन, ज्ञान, चारित्र और ईच्छा निरोधका आराधन स्वभावमें, ये मोक्षमार्गका माणिकस्तंभ है. उन चारोंमें भी सम्यग्दर्शन पहले है. सम्यग्दर्शन बिना ज्ञान नहीं, सम्यग्दर्शन बिना चारित्र नहीं, सम्यग्दर्शन बिना तप नहीं, सम्यग्दर्शन बिना श्रावक नहीं, सम्यग्दर्शन बिना मुनि नहीं. सम्यग्दर्शन बिना व्यवहारसे भगवानकी भक्ति भी नहीं.

कहते हैं, ‘द्रव्यदृष्टि च संपूर्ण, शुद्धं सम्यग्दर्शनम्’. इसीके शुद्ध सम्यग्दर्शनका लाभ होता है. लौ, ये लाभ. बनिये लाभ करते हैं न? कितने पैसे लुअे? पचास हजार बढे, लाभ या दो लाभ? लिसाब करते हैं कि नहीं? दशेरा कहते हैं न? क्या कहते हैं? विजया दशमी. दशेरा. लिसाब लिभनेको जते हैं. दिवाली आये तो लिसाब लिभना चाहिये न. वह लाभ कितना लुआ उसका मिलान करता है. आत्मामें क्या लाभ लुआ, वह बात यहां करते हैं. सम्यग्दर्शनका लाभ वही लाभ है. दूसरा कोई लाभ है नहीं. समझमें आया?

देओ! रागकी मंदता लुई वह भी लाभ नहीं. लक्ष्मी प्राप्त लुई, कौड, दो कौड, पांच कौडका लाभ नहीं, कुटुंब-कबीला बहुत लुआ वह लाभ नहीं, अकेले व्रत, नियमका राग मंद किया वह भी लाभ नहीं. लाभ तो भगवान त्रिलोकनाथ उसे कहते हैं कि, वही यहां तारणस्वामी कहते हैं कि लाभ तो सम्यग्दर्शनका लाभ मिलना वह लाभ है. समझमें आया? भगवान आत्मा देहदेवणमें बिराजमान परमानंदकी मूर्ति है. परमात्मा अपना निज स्वरूप.

उसकी द्रव्यदृष्टि संपूर्ण करके अपनेमें सम्यग्दर्शनका लाभ होना उसका नाम लाभ सवाया (है). बिनये विभते हैं कि नहीं? लाभ सवाया, ऐसा कुछ विभते हैं न? लक्ष्य लाभ. लक्ष्य लाभ ये. आत्माका अंतर लक्ष्य करनेमें सम्यग्दर्शनका लाभ होता है. ये लक्ष्य लाभ है, दूसरा कोई लाभ है नहीं.

कहते हैं, शुद्ध सम्यग्दर्शनका लाभ होता है. शुद्ध शब्दप्रयोग किया है न. व्यवहार सम्यग्दर्शन नहीं. व्यवहार सम्यग्दर्शन, सम्यग्दर्शन है नहीं. देव-गुरु-शास्त्रकी श्रद्धा करना, नौ तत्त्वकी भेदवाली श्रद्धा, वह तो व्यवहार श्रद्धा है. वह सम्यग्दर्शन नहीं. समझमें आया? बादमें क्या कहते हैं?

‘ज्ञानमयं सार्थं शुद्धं’. ज्ञानमय यथार्थ शुद्ध आत्माका अनुभव होता है. सम्यग्दर्शनमें होता है क्या? होता है क्या? ज्ञानमय पदार्थ आत्मा. अकेला चैतन्यप्रकाश ज्ञायकमूर्ति देवने-ज्ञानने स्वभाव स्वरूप, ऐसा ज्ञानमय शुद्ध आत्माका अनुभव होता है. सम्यग्दर्शनके लाभमें ज्ञानमय आत्माका अनुभव होता है. रागका अनुभव छूटकर, थोडा हो भले, स्वभावके अनुभवका लाभ (होता है). ज्ञानमय आत्माका आनंदका लाभ होता है. ज्ञानमय यथार्थ शुद्ध आत्माका अनुभव होता है. समझमें आया?

कैसा है आत्मा? ज्ञानमय यथार्थ शुद्ध आत्मा. ऐसा नहीं कहा है कि आत्मा आस्रवमय, रागमय, दया, दानवाला आत्मा, पुण्य-पापवाला आत्मा, कर्मवाला आत्मा, ऐसा नहीं (कहा है). ज्ञान चैतन्यप्रकाश, मात्र ज्ञ-स्वभाव. ज्ञानप्रकाश. ज्ञान (यानी) ये वाणी, पुस्तक, अक्षर नहीं, हां! अंदर प्रकाश जो चैतन्यका ज्ञानमय है, वह ज्ञानमय शुद्ध पदार्थ, उसका अनुभव-भोगना होना उसका नाम सम्यग्ज्ञान कलनेमें आता है. श्रावकको यौथे गुणस्थानसे वह शुरु होता है. समझमें आया?

करणानुयोगकी चिंताका इव, भाई! जैसे लिया है. देभो! करणानुयोग, करणानुयोग अकेला परिणाम-परिणाम करे, ऐसा नहीं. करणानुयोगके परिणामका विचार कर और उस परिणामको ज्ञाननेवाला त्रिकाल द्रव्य, उसका ज्ञान कर तो करणानुयोगकी चिंताका इव कलनेमें आता है, नहीं तो कलनेमें आता नहीं. बहुत भेद आते हैं न? भेद. ऐसा किया, कर्म प्रकृति ऐसी है, धतना उदय आता है, ऐसा है. हो. सबका इव क्या? करणानुयोगकी विचारधाराका इव क्या? १४८ प्रकृति है, आठ कर्म है, उसकी १४८ प्रकृति है, मिथ्यात्वमें धतनी प्रकृतिका उदय है, धतनी सत्ता है, धतनी उदिरणा और धतना विपाक. उसका इव क्या? कहते हैं, कहते हैं न?

‘करणानुयोग चिंतनं’. करणानुयोग, परिणामका स्वका और परका परिणामकी विचारधारामें द्रव्य स्वभावका लाभ होना उसका इव है. करणानुयोगमें वीतरागता कहा न? चारों अनुयोगमें वीतरागता कहा है कि क्या? चारों अनुयोगका सार भगवानने वीतरागता कहा है. पंचास्तिकाय.

शास्त्र तात्पर्य. १७२ गाथा अपने अधूरी है. सब शास्त्रका तात्पर्य वीतरागभाव (है). करुणानुयोगमें भी वीतरागता है. क्या? निमित्त, राग और अल्प पर्यायसे लटकर स्वभाव पर दृष्टि दे वह वीतरागता है. वह शास्त्र पढनेका इल है. अकेला कंठस्थ कर ले, लोगोंको कहे वह कोई शास्त्रका तात्पर्य है नहीं. 'करणानुयोग चिंतन'. करुणानुयोगका चिंतन, वह उसका इल है. समझमें आया? बादमें, उप६? उप६.

द्रव्यानुयोग उत्पाद्यं, द्रव्यदृष्टि च संजुतं।

अनंतानंत दिस्टंते, स्वात्मानं व्यक्त रूपयं॥३५६॥

क्या कला? द्रव्यानुयोगका अभ्यास करना चाहिए. द्रव्यानुयोगका अर्थ आत्मा क्या है, परमाणु क्या है, विकार क्या है, ऐसा अभ्यास तत्त्वदृष्टिका करना चाहिए. द्रव्यानुयोग द्रव्य जिसमें प्रधानपने है, उसका अभ्यास करना चाहिए. 'द्रव्यानुयोग उत्पाद्यं'. अभ्यास करना चाहिए. 'उत्पाद्यं'नो अर्थ 'अभ्यास करना चाहिए, अम वीधुं छे. 'द्रव्यानुयोग उत्पाद्यं' छे ने शब्द? भाई! अनो अर्थ 'छे. उत्पाद्य अटवे उत्पन्न करवो. द्रव्यानुयोगनो अभ्यास करवो. जुओ! चार अनुयोगमें द्रव्यानुयोगका अभ्यास मुख्य आत्माकी दृष्टि प्राप्ति करनेमें वही अभ्यास मुख्य है. समझमें आया?

'द्रव्यदृष्टि च संजुतं'. साथमें द्रव्यार्थिकनयसे शुद्ध आत्माकी दृष्टि भी प्राप्त करनी चाहिए. क्या कहते हैं? अकेला अभ्यास-अभ्यास नहीं. अकेला द्रव्यानुयोगका अभ्यास कर लिया कि ये आत्मा है, ऐसा है, ये ऐसा है, वह तो परलक्ष्यी बात लुयी. अपना आत्मा अंतर वस्तु अभंडानंद प्रभु पूर्ण स्वरूप है, उसकी अंतर दृष्टि करके द्रव्यदृष्टि सहित अभ्यास करना, उसका नाम द्रव्यानुयोगका तात्पर्य है. समझमें आया? द्रव्यदृष्टि भी प्राप्त करनी चाहिए. जिससे 'स्वात्मानं व्यक्त रूपयं, अनंतानंत दिस्टंते' क्या कहते हैं? अपने शुद्ध आत्माके समान जगतकी अनंतानंत .. प्रगट्पसे दिभाई पडे. क्या कहते हैं? जिसकी राग और अल्पज्ञ आदि पर्यायकी दृष्टि लटकर ज्ञायक पूर्ण स्वभावकी दृष्टि लुई, उसकी दृष्टिमें अनंत आत्मा परमात्मस्वरूप है, पर्यायको छोडकर स्वभाव परमात्मा है, ऐसा उसको देखनेमें आता है. अमरचंद्रभाई! अपनी पर्यायदृष्टि छूट गई तो दूसरेको देखनेमें पर्यायसे नहीं देखकर उसका द्रव्य स्वभाव क्या है, अनंतानंत आत्मा, यौद ब्रह्मांड....

ये क्यों कला? कोई अकेली आत्मा कहते हैं तो उसको खीजका भान नहीं है. वेदांत आदि अकेली आत्मा कहते हैं. जैनमें भी कितने ही कथन करते.. करते.. करते.. करते अकेलें आ जाते हैं. ऐसा है नहीं. अनंत आत्मा है. 'ईसलिये सिद्ध किया है. अमरचंद्रभाई! कोई कहता है न कि ये अंततः तो वेदांतमें चला जाता है. अकेली व्यक्ति अकेली व्यक्ति नहीं, अनंत व्यक्तिरूप अकेली. ऐसा नहीं है, ऐसा नहीं है. ऐसा है नहीं. लौमें लौ मिल जाती है ऐसा भी नहीं है. अपना तत्त्व पर अनंत आत्मासे भिन्न है. समझमें आया? वह

करते-करते खले जाते हैं, निश्चयका अभ्यास करते (मानने लगते हैं कि), अेक आत्मा है, वेदांत जैसा हो गया, अनंतमें मल गया. दृष्टि अनंतमें मल गई उसका नाम सम्यक्. अैसा है नहीं.

ईसलिये तारुणस्वामी (कहते हैं), जैन सर्वज्ञ परमात्माने, त्रिलोकनाथ परमेश्वरने जो अनंत आत्मा देणे, अनंत पदार्थ देणे, उसको साथमें सिद्ध करते हैं. समजमें आया? आपको मालूम नहीं होता, अध्यात्मकी बात करते-करते अैसी बात करे कि उसमें अेक ही आत्मा रह जाये और अनंत आत्माका नाश हो जाये. बहुत अखड़ी करते हैं, भाई! अखड़ी बात करते हैं. मालूम नहीं है, भान नहीं है. सेठ! अध्यात्मकी अैसी बात करे कि ओहो..! अंततः तो अेक है कि नहीं? अंततः तो अेक स्वरूप है कि नहीं? है ही नहीं.

प्रत्येक आत्माकी अनादिकी सत्ता भिन्न है और सिद्ध परमात्मामें अनंत सत्ता भिन्न रहती है. कभी सिद्धकी सत्ता अेक हो जाती नहीं. मोक्षमें भी पूर्णानंदकी प्राप्ति प्रत्येक आत्माको दुई तो प्रत्येक सत्ता सिद्धमें भी भिन्न है. अनादिकी भिन्न है, तो मुक्ति होनेके बाद अपना नाश हो जाये कि भिन्न सत्ता निर्मल रह जाये? निर्मल भिन्न सत्ता रहती है. तारुणस्वामी कहते हैं कि 'अनंतानंत दिस्टंते, स्वात्मानं व्यक्त रूपयं'. अनंत आत्माओं निर्मल पूर्ण ज्ञानधन हैं ज्ञायकभावस्वरूप. क्यों? कि अपने आत्माको पुण्य-पापका विकल्प नाम आश्रयसे भिन्न जाना, कर्मसे भिन्न जाना, वही आत्मा. तो सब आत्मा अैसे हैं. कोई आत्मा रागवाला है और कोई मिथ्यात्ववाला है, कोई कर्मवाला है, अैसा नहीं है. क्योंकि आत्मा अैसा है नहीं. समजमें आया? देवीवालज्ज! सब आत्मा कैसे हैं? देओ!

कल कल था न? देवयंदज्ज भी कहते हैं. 'प्रभु! तुम ज्ञाणग रीति सौ जग देभता हो लाल..' हे नाथ! हे सर्वज्ञप्रभु! आप सर्व ज्वको शुद्ध देभतो हो. 'निज सत्ताअे शुद्ध सौने पेभता हो लाल..' हे परमात्मा! सब आत्माकी अंतर निर्मल ज्ञायक, आनंदकी शक्तिको आप आत्मा कहते हो. आपने आत्माको अैसा देभा है. बराबर है? समजमें आया? तो सम्यक्दृष्टिको अपना जब राग और पर्यायका अंशकी दृष्टिको छोडकर स्वभावकी पूर्ण ज्ञायकभावकी दृष्टि दुई, अैसे ही सब आत्मा ज्ञायकमय हैं, अैसी मान्यतामें देभते हैं. समजमें आया? पर्यायमें ईर्क है, वस्तुमें ईर्क नहीं है, अबलवि हो या लवि हो, अनंत संसारी हो या अेकावतारी हो. समजमें आया?

'अनंतानंत दिस्टंते, स्वात्मानं व्यक्त रूपयं'. क्या कहते हैं? शुद्ध आत्माके समान. जगतकी अनंतानंत आत्माओं प्रगटस्वरूपसे दिखलाई देती है. प्रगटस्वरूपसेका अर्थ-वह पर्याय प्रगट है उतना नहीं, उसका पूर्ण स्वरूप है. चिदानंद ज्ञायकज्योत अंजानंद पूर्ण परमात्मा, सब आत्मा अैसे हैं. अेकेन्द्रियमें भी अैसा है, दोईन्द्रियमें भी अैसा है. अेकेन्द्रिय, दोईन्द्रिय तो काया और अल्प पर्यायका नाम (है), वह वस्तुका स्वरूप नहीं है. वस्तु अेकेली चैतन्यज्योत

यौद ब्रह्मांडमें अनंत आत्मा मात्र ज्ञायकभावसे भरे हैं, जैसे अपनी पर्यायदृष्टि छोड़कर स्वभावकी दृष्टि हुई तो सब आत्माको सम्यग्दृष्टि परमात्मा स्वभावसे देखते हैं. रतनवावज! सुना ली नहीं.

मुमुक्षु :- ...

उत्तर :- प्रगट, प्रगट. वस्तु प्रगट ली है. वस्तु है न? वर्तमान पर्याय प्रगट है न? वस्तु प्रगट नहीं है. लेकिन ज्ञानीने अपने द्रव्यको श्रद्धामें प्रगट देखा तो सब आत्मा प्रगट शुद्ध हैं. ज्ञायक प्रगट है, अप्रगट है नहीं.

मुमुक्षु :- पोताना आत्माने..

उत्तर :- अपना द्रव्य देखा न, इसलिये सबका द्रव्य स्वभाव, वस्तु स्वभाव व्यक्त नाम प्रगट निर्मल है, ऐसा ज्ञानी अपनेको देखते हैं, ऐसा परको देखते हैं. पर्यायको अपनेमेंगौण की, तो दूसरेको देखनेमें पर्यायको गौण करके देखते हैं. ओहोहो..! समझमें आया?

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- वास्तु ये है. निश्चय वास्तु यह है न. (बाकी) वास्तु क्या है? किसीके मकानमें और किसीके पत्थरमें रहना, वह वास्तु है? सेठ!

‘अनंतानंत दिस्टंते, स्वात्मानं व्यक्त रूपयं’ उप६ (गाथा पूरी) हुई. उप७.

दिव्यं द्रव्यदृष्टिं च, सर्वज्ञं शाश्वतं पदं।

अनंतानंत चतुष्टं, केवलं पद्मम ध्रुवं॥३५७॥

आहा..! कहां रहा है? आत्माके कितने गुण गाये हैं! तारणस्वामीने आत्माके गाने कितने गाये हैं! उसमें रहे हुअेको, संप्रदायमें रहे हुअेको मालूम नहीं. शोभावावज! कलनापतो पडे न. रतनवावज! मालूम नहीं क्या कहते हैं. अपने इलानेमें हैं, अपने तारणसमाजके कहलाते हैं. क्यों सेठ? लेकिन क्या कहते हैं उसकी पीछान है? परमेश्वर जैन त्रिलोकनाथकी वाणी जैसी आयी, उसका अनुभव करके, ज्ञान करके (नक्की) किया है कि भगवान कहते हैं वही सत्य है. इसके सिवा अन्य कोई कहते हैं वह तीन कालमें सत्य नहीं है.

कहते हैं, ‘दिव्यं द्रव्यदृष्टिं च, सर्वज्ञं शाश्वतं पदं’. क्या कहते हैं? द्रव्यदृष्टि अपूर्व है. ‘दिव्यं’ शब्द है न? द्रव्यदृष्टि ‘दिव्यं’. आहा..! समझमें आया? एक ज्ञायक परमानंद परमात्मा अपनेको देखना वही दृष्टि दिव्य नाम प्रधान है. है? अपूर्व है. दूसरी कोई दृष्टिको अपूर्व कहते नहीं. समझमें आया? अपूर्व. एक समयमें भगवान अपना पूर्ण आनंद ज्ञायक (है), ऐसी दृष्टि ही अपूर्व दृष्टि है. समझमें आया? बाकी भगवान सत्ये हैं और देव-गुरु-शास्त्रकी श्रद्धाकी दृष्टि वह दृष्टि नहीं है. अमरचंद्रभाई! वह तो व्यवहार दृष्टि हो गई. ऐसा तो अनंत बैर माना है. अपना दिव्य स्वभाव, उसकी दृष्टिको ही यहां दिव्य दृष्टि कहते हैं. उसका नाम प्रधान, दिव्यता नाम प्रधान दृष्टि है.

‘सर्वज्ञं शाश्वतं पदं’ क्या कहते हैं? जो अपने आत्माको सर्वज्ञ अविनाशी पदमें दिखाती है। क्या कहते हैं? द्रव्यदृष्टिको अपूर्व क्यों कहा? द्रव्य स्वभावकी दृष्टिको अपूर्व क्यों कहा? क्योंकि वह दृष्टि अपनेमें सर्वज्ञपदको दिखाती है। अपनेमें द्रव्य स्वभावमें सर्वज्ञपदको दिखाती है। पर सर्वज्ञ परमें रहे। समझमें आता है या नहीं? प्रेमचंदजी! ‘सर्वज्ञं शाश्वतं पदं’। अपनेमें सर्वज्ञपद शाश्वत अविनाशी ध्रुव (है), जैसे पदको द्रव्यदृष्टि अपूर्व दिखाती है। समझमें आया? थोड़ा सूक्ष्म तो है। अध्यात्मिक बात है कि नहीं? श्रावकाचारकी बात है। ये तो अभी श्रावकाचारकी बात है। मुनिपना तो कहां रह गया।

कहते हैं, ‘सर्वज्ञं शाश्वतं पदं’ ये दृष्टि देखाती है। अपना निज अकेला ज्ञ-स्वभाव, ज्ञान स्वभाव, पूर्ण ज्ञायक सर्वज्ञपद, वह दिव्य दृष्टि अपूर्व, वह सर्वज्ञ अपने निज पदको दिखाती है। इसलिये उस दृष्टिको अपूर्व दिव्य दृष्टि कहनेमें आयी है। कलो, जुगराजजी! समझमें आता है? ये जैनपना है। समझमें आया? कोई संप्रदायमें जैनपना रहता नहीं। कोई कपडेमें रहता नहीं। कपडा छोडनेसे भी जैनपना आ नहीं जाता। अंतरमें.. आलाला..! ‘सर्वज्ञं शाश्वतं पदं’ ध्रुव पद, ध्रुव पद. ध्रुव पद अविनाशी आत्मा नित्यानंद सच्चिदानंद प्रभु, अपना पूर्ण स्वरूप, उसको दृष्टि दिखाती है, इसलिये उस दृष्टिको अपूर्व नाम दिव्य दृष्टि कहनेमें आयी है। दिव्य आंज, दिव्य दृष्टि, अपूर्व यक्षु. समझमें आया? ये आंज नहीं। ये तो मिट्टीकी-धूलकी है। अंदरमें परको देखना वह भी नहीं। अपनेको पूर्ण देखना, उस दृष्टिको दिव्य और अपूर्व दृष्टि कहते हैं। समझमें आया? आलाला..!

‘अनंतानंत चतुष्टं’ अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख और अनंतवीर्य केवल असहाय, परसंग रहित, निश्चल अविनाशी प्रकृष्टित कमलके समान विकसीत निर्लेप जलकाती है। क्या कहते हैं? ओलो..! द्रव्यदृष्टि वस्तुकी दृष्टि, परमार्थ तत्त्वकी दृष्टिको दिव्य क्यों कहनेमें आयी है? कि अपनेमें अनंत ज्ञान (है). शाश्वत तो कहा ध्रुव, लेकिन ध्रुवमें शाश्वतमें अंदरमें क्या रहा है? बेहद ज्ञान, बेहद दर्शन, बेहद आनंद, बेहद वीर्य (रहा है). आत्मामें अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत आनंद और वीर्य (है), ऐसा वह दिव्य दृष्टि दिखाती है। ओलोलो..! नरभेरामभाई!

केवल सहाय. कहते हैं, केवल अकेला ज्ञान, दर्शन, आनंद और वीर्यका पिंड, उसका स्वभाव अनंत अपार अमर्यादित (है). ऐसा वह दृष्टि दिखाती है। केवल परसंग रहित. राग रहित, कर्म रहित, शरीर रहित. देजो! अबद्धस्पृष्ट. भगवान आत्मा परसे बंध नहीं, परसे भिदा नहीं, परका संग नहीं, ऐसा परमानंद अपना स्वरूप, उसको दृष्टि दिखाती है। इसलिये उस दृष्टिको दिव्य नाम अपूर्व कहनेमें आया है। समझमें आया?

‘पदम’ प्रकृष्टित कमलके समान विकसीत निर्लेप जलकाती है। कमल है न? कमल. वह पहले संकुचित होता है, फिर विकसीत हो जाता है। दृष्टि दिखाती है कि अपना स्वभाव

अंदर पूर्ण पडा है, उस पूर्णमें अभ्यास करनेसे उसका विकास केवलज्ञानमें हो जाता है. जैसे अंदरमें केवलज्ञान, केवलदर्शन, आनंद दिखाती है, उस दृष्टिके विषयमें अभ्यास करते-करते कमल जैसे जिल जाता है, वैसे अपना अनंत यतुष्टय जिल जाता है. ऐसा वह दृष्टि दिखाती है. समझमें आया? ओ.. सेठी!

ऐसा कलकर क्या कला? कि कोई रागकी क्रिया या कोई व्यवहारकी क्रियासे आत्मा प्रदुद्धित होता है, ऐसा नहीं है. दृष्टि ऐसा नहीं देभती है. रतनवावज्ज! समझमें आया? यस्मा-बस्मा नहीं है? भूल गये? कलो, समझमें आया? देभो! अक गाथामें कितना कहते हैं! 'अनंतानंत चतुष्टं, केवलं पद्म ध्रुवं' दृष्टि ऐसी मनाती है कि कमल समान आत्मा प्रदुद्धित पडा है. पूर्ण अनंत यतुष्टमय, उसका अंतर अकाकार होनेसे वह प्रगट हो जाता है. कोई रागकी क्रिया या दया, दान, व्यवहार सम्यग्दर्शन, चारित्रसे प्रगट होता है ऐसा है नहीं. समझमें आया? अपने स्वभावकी अंतर दृष्टिका विषय करनेसे, उसमें रहते, रहते, रहते शक्तिमें जो अनंत यतुष्टय पडा है, वही पर्यायमें अनंत यतुष्टय प्रगट हो जायेगा. कार्यरूप हो जायेगा कारणमेंसे. आलाला..! समझमें आया?

कहते हैं, कि 'केवलं पद्म ध्रुवं'. अकेला विकसीत निर्लेप. भगवान अंदर निर्लेप अपना शुद्ध है, ऐसा दृष्टि देभाती है और पर्यायमें भी ऐसा निर्लेप अभ्यास करनेसे हो जायेगा. कोई दूसरेका अभ्यास करके, व्यवहार करते-करते, निमित्तका संग करके केवलज्ञान नाम मुक्ति होगी ऐसा है नहीं. ऐसा दृष्टि दिखाती नहीं. भाई! दृष्टि ऐसा नहीं दिखाती है. आलाला..! अपना त्रिकाल अनंत यतुष्टय अंदर पडा है, उसे दृष्टि दिखाती है और उस यतुष्टय अंदरमेंसे अकाकार होकर प्रगट होता है. दूसरी कोई क्रिया उसकी है नहीं. विकल्प, दया, दान और व्यवहार-इवहार प्रगट होनेमें कारण-कारण है ही नहीं. मूलचंद्रभाई! आलाला..! उसका नाम द्रव्यदृष्टि, उसका नाम सम्यग्दर्शन, उसका नाम धर्मका प्रथम पाया-धर्मकी नीव-धर्मकी प्रथम नीव. बादमें श्रावकपनेका व्रतका विकल्प उठता है. जब उसकी स्थिरता विशेष होती है, तो वहां श्रावकपना उसको पंचम गुणस्थान योग्य दशा होती है. विकल्प उठता है उसको व्यवहार कहते हैं. स्थिरता होती है उसको निश्चय कहते हैं. श्रावकके आचारका वर्णन करनेसे पहले दृष्टिका वर्णन ऐसा किया है. ऐसी दृष्टि नहीं हो तो श्रावकपना सय्या कभी होता नहीं.

(श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

